सद्विचार पुस्तक माला नं. ४

सुख और सफलता के मूल सिद्धान्त
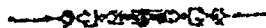
श्रीयुत जेम्स एलन के "Foundation Stones to Happiness and success" नामक पुस्तक का भाषानुवाद।

अनुवादक:—

श्रीयुत बाबू दयाचन्द्रजी गोयलीय, बी. ए.
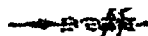
प्रकाशक:—

हिन्दी साहित्य भण्डार, मल्हीपुर-सहारनपुर।

तृतीयावृत्ति] अप्रेल १९३१ ई० [मूल्य =)॥

Printed by Telu Ram at the Malhipur Press.

निवेदन।

विदेशों में श्रीयुत जेम्स एलन की पुस्तकों का कितना आदर है इसका अनुमान इससे किया जा सकता है कि वहां उनकी प्रत्येक पुस्तक की कई हज़ार प्रतियां बिक चुकी हैं। सौभाग्य से अंग्रेज़ी दां भारतवासी भी उनके ग्रन्थों से अब लाभ उठाने लगे हैं, परंतु दुःख के साथ लिखना पड़ता है कि हिन्दी में उनकी पुस्तकों का अभी तक अनुवाद बहुत कम हुआ है जिससे हिन्दी जाननेवाले उनकी शिक्षाओं से वंचित रहते हैं। इसी कमी को दूर करने के लिए हमने उनकी पुस्तकों को प्रकाशित करना प्रारम्भ किया है। यह चौथी पुस्तक है।

जिस प्रकार मनुष्य मकान के बनाने से पहिले उसका नक़शा बना लेते हैं और फिर बिलकुल उसके अनुसार मकान बनवाता रहता है, पहले जमीन को नाप तोल कर मकान की नींव डालता है, फिर उसीपर इमारत खडी करता है. ठीक उसी प्रकार मनुष्य को पहले अपने जीवन के उद्देश्य बना लेने चाहियें और फिर उनको दृष्टि के सामने रखते हुये उनकी प्राप्ति के उपायों को निरन्तर उपयोग में लाना चाहिये और प्रत्येक कार्य नियमानुकूल करना चाहिये। सुख और सफलता प्राप्त करना प्रत्येक मनुष्य का अभीष्ट है, इसी लिए इस पुस्तक में सुख और सफलता के सिद्धांतों का संक्षेप में वर्णन किया गया है। भारत-वासियों के लिये यह पुस्तक अत्यंत उपयोगी है। हमें आशा है कि हिंदी भाषा भाषी इस पुस्तक से यथेष्ट लाभ उठावेंगे।

प्रथमावृत्ति—अक्टूबर १९१७
द्वितीयवृत्ति—अक्टूबर १९१८
तृतियावृत्ति—अप्रेल १९२१

दयाचन्द्र गोयलीय,
लखनऊ।

सदुपदेश।

उत्तमता के काज सों, उत्तमता बढ़ि जात।
नेकी कारक जन सदा, अधिक नेह ह्वै जात॥
नित प्रयोग उपयोग सों, अधिक योगता होत।
नेकी नीति सुकर्म को, दिन दिन बढ़त उदोत॥

अंतरात्मा माहि बसत सत्ता सुतंत्र की।
अनुसंधानी जन पावन तहँ खोज मंत्र की॥
जन निज मन ही के कारन दासताधिकारी।
मन ही के बल होत प्रबल बिरदावलिधारी॥
सब स्वर्ग नर्क पाताल महँ चहुँ दिशही जीव समाज को।
सुख दुःख सदा फल बनत है कारज अपने आप को॥

विषय सूची ।

सुख और सफलता के मूल सिद्धान्त।

१—सदुद्देश्य।

इस का जानना बुद्धिमानी है कि कौनसा काम पहिले करना उचित है और उसके लिये कौनसा उपाय पहिले काम में लाना चाहिए। किसी काम को विना सोचे विचारे शुरू कर देना, उसे भी शुरू से नियमानुसार न कर के बीच से करना अथवा अंत से करना असफलता का चिह्न है। जो काम शुरू से नियमानुसार किया जाता है, उसी में सफलता होती है। विद्यार्थी पहिले पहिल ही बीजगणित और रेखागणित के प्रश्नों को हल नहीं कर सकता। शुरू में उसे गिनती सीखनी पडती है और वर्णमाला का अभ्यास करना पडता है। धीरे धीरे कुछ काल के बाद उस में बीजगणित और ज्योमिति के समझने की शक्ति आ जाती है। जितने ज्ञानी ध्यानी पुरुष तुम देखते हो, उन्होंने इस अवस्था को प्राप्त करने के लिये वर्षों धैर्य के साथ अभ्यास किया है और जनता के अनुभव से लाभ उठाया है। निशाना वही मनुष्य ठीक लगा सकेगा, जो निशाने की ओर अपनी दृष्टि रखता है और उचित

स्थान से निशाना लगाता है।) इसी प्रकार कार्य व्यवहार में उन्हीं लोगों को सफलता होती है जो नियमानुसार कार्य करते हैं। (जो लोग अनियम काम करते है वे अधिक श्रम करने पर भी असफल रहते है।)

अतएव जीवन में सुख और सफलता प्राप्त करने के लिये सबसे पहिली आवश्यक बात यह है कि मनुष्य के सदुद्देश्य होने चाहिएँ। बिना सदुद्देश्यों के कोई काम भी ठीक नहीं होगा और जीवन दुःख और अशांति से व्यतीत होगा। दुनिया में जितना लेन देन होता है, और जितने बैंक और कारखाने चलते हैं, सबका काम हिसाब किताब पर निर्भर है। (हिसाब क्या है? केवल एक से लेकर दस तक की संख्या का हेर फेर है।) इन्हीं संख्याओं के हेर फेर से लाखों और करोड़ों का हिसाब किताब होता है। (दुनिया में जितनी किताबें हैं, जितना साहित्य है और जितने विचार हैं वे सब वर्णमाला के अक्षरों से निकले हैं, अर्थात् उन्हीं अक्षरों का हेर फेर कर इतनी पुस्तकें और इतना साहित्य बन गया है। (बड़े से बड़ा ज्योतिषी भी पहिली दस संख्याओं को नहीं भूल सकता। बड़े से बड़ा विद्वान भी वर्णमाला के अक्षरों को नहीं भूल सकता। यद्यपि प्रत्येक वस्तु में मुख्य और मौलिक सिद्धांत बहुत कम और साधारण होते हैं, तथापि उनके बिना काम नहीं चल सकता और कुछ लाभ नहीं हो सकता। मनुष्य के जीवन में भी मुख्य सिद्धांत बहुत कम हैं और सरल हैं। उनको अच्छी तरह से जानने और इस बात का अध्ययन करने से कि किस प्रकार जीवन की घटनाओं में उनका उपयोग किया जाता है, अशांति दूर होती है, अजय और अक्षय चरित्र का दृढ़ रूप से संगठन होता है और स्थाई सफलता प्राप्त होती है।

जिस समय मनुष्य उक्त सिद्धांतों को भली भांति जान लेता है, जीवन की भिन्न २ अवस्थाओं में उनका उपयोग करने लगता है और उसका चरित्र सगठित हो जाता है, उस समय उसका जीवन विजय वन जाता है अर्थात वह अपने जीवन का सर्वाधिकार सम्पन्न स्वामी वन जाता है।

जीवन के प्रथम और मौलिक सिद्धांत चरित्र से सम्बंध रखने वाले कुछ सद्गुण हैं। उनका वतला देना सहज है। नित्य प्रति वे लोगों की जिह्वा पर रहते हैं, परंतु उनको व्यवहार में लाना और उनके अनुसार प्रवृत्ति करना वहुत कम लोगों को मालूम है। यहां पर हम उन में से केवल पाच का उल्लेख करेंगे। यद्यपि जीवन के मौलिक सिद्धान्तों में वे सव से सरल हैं, परंतु क्या कारीगर, क्या दूकानदार, क्या अमीर और क्या गरीव प्रत्येक मनुष्य के जीवन में प्रति दिन उनका काम पड़ता है। उनमें से एक को भी नहीं छोडा जा सकता। जो मनुष्य उनको उपयोग में लाना जान लेता है और उनके अनुसार चलने लगता है, वह जीवन के अनेक कठिनाइयों को और आपत्तियों से निकल जाता है और विचारों की उन धाराओं में चला जाता है जो स्थाई सफलता के प्रदेशों की ओर शांति से वहती है। पहिला सद्गुण कर्त्तव्य है।

कर्त्तव्य—यद्यपि यह शब्द वहुत पुराना हो गया है। प्रायः प्रत्येक मनुष्य प्रति दिन दो चार वार इसको जिह्वा पर लाता है, तथापि काम करनेवाले के लिए इसकी अत्यंत आवश्यकता है। इसके अर्थ ये हैं कि अपने काम को अत्यंत श्रम के साथ जी जान से करना चाहिये, परंतु साथ में दूसरे के काम में तनिक भी हस्तक्षेप न करना चाहिये, अर्थात् दूसरे के काम की परवा न

करके अपने काम का जहां तक अच्छा हो सके करना चाहिये। जो मनुष्य निरंतर दूसरो का उपदेश देता रहता है और उन्हें काम की रीति बताता रहता है वह स्वय अपने काम को बिलकुल नही कर सकता। उसका काम बिलकुल खराब रहता है। कर्त्तव्य के यह भी अर्थ है कि जिस काम को मनुष्य करे उसे एकाग्र-चित्त होकर करे। दूसरे काम का उस समय मन मे विचार भी न लावे। जितनी मनुष्य मे बुद्धि, योग्यता और चातुर्य हो वह सब उस काम के करने मे लगा दे। यद्यपि भिन्न भिन्न मनुष्यों के भिन्न २ कर्त्तव्य होते है और प्रत्येक मनुष्य अपने कर्त्तव्य को अपने पड़ोसी के कर्त्तव्य की अपेक्षा भली भांति जानता है तथापि सिद्धांत सदा एक होता है और सबके लिये एकसां होता है।

दूसरा सद्गुण ईमानदारी है। इससे यह मतलब है कि मन से, वचन से, काय से, किसी प्रकार भी दूसरे को धोका न दिया जाए। सदा सच्चाई और ईमानदारी को काम मे लाया जाए। जो कुछ मन मे हो, वही बोलना चाहिए और जो कुछ बोलो वही मन मे होना चाहिए। धूर्तता और मायाचार को त्याग कर सरल और निष्कपट होना चाहिये। दूसरे के आगे कभी किसी अनुचित कार्य के लिए गिड़गिड़ाओ भी मत और न कभी किसी से अनुचित सहायता की आशा रक्खो। अपने काम से नाम पैदा करो और काम को ईमानदारी से करो अवश्य सफलता होगी।

तीसरा सद्गुण मितव्ययिता अर्थात किफ़ायतशारी है। इसका अभिप्रायः यह है कि अपने समय को, द्रव्य को, और

श्रम को सावधानी और बुद्धिमानी से व्यय करो अर्थात उन्हें व्यर्थ में नष्ट न करो। फ़िज़ूल ख़र्ची करके भोग विलास और विषय वासना से, तन को, मन को और धन को नष्ट न करो। इस गुण से मनुष्य में बल, श्रम, साहस और योग्यता आती है।

उदारता—यह चौथा सिद्धांत है। उदारता और मितव्यय का विरोध नहीं है। सच पूछो तो वही मनुष्य उदार हो सकता जो संयमी और मितव्ययी होता है। जो मनुष्य अपने धन का अथवा श्रम का अथवा अपनी मानसिक शक्तियों का दुरुपयोग और व्यर्थ व्यय करता है उसके पास दूसरों को देने के लिये कुछ नहीं रहता। केवल किसी को धन देने का नाम ही उदारता नहीं है। यह तो बहुत ही नीचे दरजे की उदारता है। वास्तव में दूसरों को अपने विचारों से और कार्यों से लाभ पहुँचाने, उनके साथ सहानुभूति प्रकाशित करने और अपने विरोधियों और शत्रुओं तक के साथ दया का व्यवहार करने का नाम उदारता है। उदारता का प्रभाव बड़ा विशाल होता है। यह शत्रुओं को मित्र बना देती है और निराशा का काला मुँह कर देती है।

इंद्रिय पराजय—यह पांचवां और सबसे पिछला सिद्धांत है, परंतु सब से ज्यादा ज़रूरी है। इस के अभाव से न जाने संसार में कितने दुःख और कितनी आपत्तियां आती हैं। मानसिक, शारीरिक और आर्थिक सभी प्रकार के कष्ट मनुष्य को सताते हैं। जो दुकानदार तनिक सी बात पर अपने ग्राहक से बिगड़ बैठते हैं, उन्हें कभी सफलता प्राप्त नहीं हो सकती। उसके काम में कभी उन्नति नहीं हो सकती। यदि दुनिया के सब आदमी इंद्रियपराजय की प्राथमिक अवस्था

में भी आ जाएँ अर्थात तनिक भी अपनी इन्द्रियों को अपने वश में करने का अभ्यास करने लगें, तो दुनिया में क्रोध का नाम निशान मिट जाए। यद्यपि, संतोष, सभ्यता, दृढ़ता, नम्रता और पवित्रता आदि गुण जो इन्द्रिय-पराजय के अन्तर्गत हैं, लोग धीरे २ सीख सकते हैं, तथापि जब तक उनको अच्छी तरह से नहीं सीख लिया जाता, तब तक मनुष्य का चरित्र संगठित नहीं होता और सफलता प्राप्त नहीं होती। जो मनुष्य अपने मनको और अपनी इंद्रियों को अपने वश में कर लेता है उसे एक बड़ा मनुष्य समझना चाहिए। साधारण मनुष्यों में उसकी गणना नहीं की जा सकती।

ये पांच सिद्धांत ज्ञान प्राप्ति के पांच द्वार और सफलता के पांच मार्ग हैं, परंतु केवल इनके नाम उच्चारण करने से अथवा इनके गुण गान करने से कोई लाभ नहीं। लाभ इनके जानने और इनके अभ्यास करने में है। अतएव जिस मनुष्य को सुख और सफलता की अभिलाषा है, उसे इन पांचों सिद्धांतों का निरन्तर मनन और अभ्यास करना चाहिए। केवल कह कर ही नहीं, किन्तु करके दिखला देना चाहिए।

१—सफलता की प्राप्ति के उपाय।

जो अन्तर एक लकड़ी के लट्ठे और एक चलती हुई मशीन में है, अथवा एक बंद घड़ी और चलती हुई घड़ी में है, वही अन्तर सच्चे जीवन और झूठे जीवन में है। जिस प्रकार मशीन उसी समय तक उपयोगी और लाभदायक है, जब तक वह बराबर नियमित रूप से चलती है, और उसके तमाम पुरजे ठीक २ काम करते हैं, उसी प्रकार जीवन उसी समय तक सुन्दर और उपयोगी है जबतक उसके सम्पूर्ण अंग उत्तम रीति से नियमानुसार काम करते हैं। जिस मनुष्य का जीवन किसी नियम पर निर्धारित नहीं, जिस जीवन मे शांति और समता नहीं, वह जीवन निष्फल है। ऐसे जीवन का हम सच्चा जीवन नहीं कहते। वह झूठा और निस्सार है अतएव यदि सच्चे जीवन की अभिलाषा है, तो नियमासार जीवन व्यतीत करना चाहिये। जिस प्रकार संसार एक नियम पर निर्धारित है, और उसमें प्रत्येक कार्य नियमानुसार होता है, उसी प्रकार मनुष्य को अपना जीवन नियमित बनाना चाहिये अर्थात अपने जीवन की प्रत्येक घटना का विचार रखना चाहिये। मूर्ख और बुद्धिमान मनुष्य में यही अन्तर है कि बुद्धिमान मनुष्य छोटी २ बातों की ओर भी पूरा पूरा ध्यान रखता है, परन्तु मूर्ख मनुष्य उनकी कोई परवा नहीं करता। बुद्धि इस बात के लिये प्रेरणा

करती है कि छोटी से छोटी चीज भी नियत स्थान पर रक्खी जाए और उसकी पूरी पूरी सावधानी की जाए। नियम का उल्लंघन करना नियमानुसार काम न करना दुःख और आपत्ति को मोल लेना है।

अच्छा दूकानदार इस बात को अच्छी तरह से जानता है कि नियमानुसार काम करने में उन्नीस हिस्से सफलता है और अनियमित रूप से काम करने में असफलता ही असफलता है। बुद्धिमान मनुष्य जानता है कि नियमानुसार जीवन व्यतीत करने में तीन हिस्से सुख है और अनियम करने में दुःख ही दुःख है। मूर्ख कौन है? वह मनुष्य जिसके विचार, शब्द और कार्य असावधानी से होते है, जिसको अपने मन वचन काय के योग का विचार नहीं होता, अर्थात् जिसे इस बात का बोध नहीं होता कि मैं क्या विचार रहा हूं, क्या बोल रहा हूं और क्या कर रहा हूं। बुद्धिमान मनुष्य कौन है? वह जिसके विचार, शब्द और कार्य सावधानी पूर्वक होते है, अर्थात् जो सोच समझ कर बोलता, विचार करता और काम करता है। वह एक शब्द भी अपने मुख से बिना सोचे समझे नहीं निकालता उसका प्रत्येक शब्द जंचा तुला होता है।

केवल स्थूल पदार्थों के ठीक तौर से धरने, उठाने पर ही सच्चे मार्ग की इतिश्री नहीं समझना चाहिये। यहां से तो आरम्भ होता है मन को वश में रखने, कषायों और वासनाओं को शमन करने, सोच समझ कर मुख से शब्द निकालने और विचारों को समीचीन रूप से तरतीब देने और सद्कार्यों को पसंद करने की आवश्यकता है। दृढ़ और समीचीन उपायों के

द्वारा जीवन को सुखी और स्वस्थ बनाने के लिये मनुष्य को उचित है कि प्रतिदिन काम में आने वाली छोटी छोटी चीज़ोंकी ओर पूरा पूरा ध्यान रक्खे। यहां तक कि खाने पीने सोने और उठने बैठने का समय नियत होना चाहिये। जो समय भोजन करने का है सदा उसी समय पर भोजन करो और जो समय सोने का है, सदा उसी समय पर शयन करो। नियत समय पर भोजन न करने से पाचन शक्ति बिगड जाती है, शरीर रुग्ण हो जाता है और उसके कारण मनुष्य का मन भी स्वस्थ नहीं रहता। शरीर का प्रभाव मन पर और मन का शरीर पर सदैव पड़ता रहता है। नियत समय पर भोजन करने से शरीर भी स्वस्थ रहता है और मन भी स्वस्थ रहता है। अतएव जीवन को सुखी रखने के लिये इस बात की आवश्यकता है कि प्रत्येक काम के लिये समय नियत हो; और जो समय जिस काम के लिए नियुक्त हो, उसमें वही काम करना चाहिये, खेल के समय खेल और आराम के समय आराम करना चाहिए अन्यथा मनुष्य को कभी भी सुख नहीं मिल सकता और न कभी उसे अवकाश मिल सकता है, न कभी उसका काम पूरा होगा और न कभी उसे आराम करने का समय मिलेगा वह सदा समय की शिकायत करता रहेगा, परंतु इसके विपरीत जो मनुष्य नियत समय पर हर एक काम को करेगा, वह काम भी कर लेगा और समय भी उसे मिल जाएगा।

परन्तु ये बातें भी शुरू की बाते है। इन पर भी हमें संतोष नहीं करना चाहिये। हमे अपने शब्दों, कार्यों, विचारों और इच्छाओंको नियमित रखना चाहिए। तभी मूर्खता से बुद्धिमानी का और निर्बलता से प्रबलता का विकास होगा। जब मनुष्य

अपने मन को इस प्रकार साध लेता है कि उसके प्रत्येक भाग में समता और सहानुभूति पैदा हो जाती हैं, तब वह परम सुख श्रेष्ठ बुद्धि और उच्चतम योग्यता को प्राप्त कर लेता है। परन्तु यह अंतिम और अभीष्ट अवस्था है। इस अवस्था को प्राप्त करने के लिये मनुष्य को प्राथमिक अवस्था से आरम्भ करना चाहिये। शुरू से प्रत्येक कार्य को धीरे २ नियमानुसार करते हुए और दिन दिन आगे बढ़ते हुए अभीष्ट स्थान पर पहुँचना चाहिये। ज्यों ज्यों मनुष्य आगे बढ़ता जाएगा और उन्नति करेगा त्यों त्यों उसका बल बढ़ेगा और उसे आनंद मिलेगा।

कहने का सारांश यह है कि नियमानुसार काम करने से शक्ति और योग्यता उत्पन्न होती है और मनको वश में करने से बल और आनंद की प्राप्ति होती है। नियमानुसार काम करना और नियमानुसार जीवन को बनाना यही मनुष्य का उद्देश्य होना चाहिए

अतएव जो कुछ करो, नियमानुसार करो, जो कुछ कहो ठीक ठीक कहो और जो कुछ सोचो युक्तिपूर्वक सोचो। इसी में सफलता है। बोलने सोचने और काम करने के दृढ़ और समीचीन उपायों को ग्रहण करना दीर्घ स्वास्थ, अक्षय सफलता और अटल शाँति का मूल है, अर्थात् मन, वचन, काय के वश में रखने और उनसे ठीक ठीक काम लेने से स्वास्थ सफलता और शांति का निश्चय से लाभ होता है।

२–सुकार्य ।

जो मनुष्य सदुद्देश्य बना कर नियमानुसार काम करता है, उसे शीघ्र इस बात का पता लग जाएगा कि सुकार्यों की ओर से मनुष्य को असावधान नहीं होना चाहिये। उसे निरंतर इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि कौनसा काम अच्छा है और कौन सा बुरा। जितना उसको इस बात का ज्ञान होता जाएगा उतना ही उसका जीवन-मार्ग सरल और निष्कंटक होता जाएगा उसका समय शांति से व्यतीत होगा। ऐसा मनुष्य तमाम बातोंमें सीधे मार्गका अनुगामी होता है। वह निर्भय होकर अपना काम करता रहता है, बाह्य शक्तियों का उस पर कोई असर नहीं होता जिस मार्ग का वह अवलम्बन कर लेता है, बस उसी पर आरूढ़ रहता है। इससे यह न समझना चाहिये कि वह अपने सम्बन्धियों और निकटवर्तियों के सुख दुख की कोई चिंता नहीं करता। यह दूसरी बात है। हाँ, यह अवश्य है कि वह उनके विचारों, उनकी अज्ञानता और इच्छाओं की परवा नहीं करता। सुकार्यों से वास्तव में यह तात्पर्य है कि दूसरों के साथ सद्व्यवहार किया जाए सद्व्यवहार करने वाला मनुष्य जानता है कि सुकार्य केवल दूसरों के लाभ के लिये हैं और वह बराबर उन्हें किये जाता है, चाहे वे लोग उसके साथ उल्टा व्यवहार क्यों न करें। वह अनेक कष्टों और बाधाओं के आने पर भी अपने मार्ग से च्युत नहीं होता। चाहे संसार

उसकी बुराई करे, उसके साथ बुरा व्यहार करे, परन्तु वह सबके साथ भलाई का व्यवहार करता है।

जो लोग बुरे कामों को छोड़कर भले काम करना चाहते है, वे भले और बुरे कामों को आसानी से पहिचान सकते है। जिस तरह स्थूल जगत में पदार्थों के रूप, रस, वर्ण आदि गुणों से उनकी पहिचान की जाती है, और जो उपयोगी और लाभ-दायक समझा जाता है वह ग्रहण किया जाता है, उसी प्रकार आत्मिक जगत मे भले और बुरे कामों को उनके गुण, स्वभाव और प्रभाव से पहिचाना जा सकता है और जो उत्तम और उपयोगी हों वे ग्रहण किये जा सकते है। उन्नति के जितने काम है उनमें पहले बुरी बातों के त्याग करने की कोशिश करनी चाहिए। पीछे अच्छी बातों को ग्रहण करना चाहिए। बालक को जब बार बार उसकी गलतियाँ बताई जाती है तब वह ठीक पढ़ना सीखता है। जब तक आदमी को इस बात का ज्ञान न हो कि कौन चीज बुरी है और किस प्रकार उससे बचना चाहिये तब तक वह अच्छी बातों को नहीं जान सकता और न उनके करने का अभ्यास कर सकता है। बुरे काम वे है, जो केवल स्वार्थ-वश किये जाते हैं, जिन में दूसरे के हित व लाभ की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। ऐसे काम कुत्सित विचारों और अनुचित इच्छाओं के कारण होते है और करने वाले के दिल मे सदा उनके छिपाने का ख्याल रहता है, कारण कि वह डरता रहता है कि कहीं इनका परिणाम बुरा निकले और लोक में निंदा हो। इसके विपरीत अच्छे काम वे है जिनमें दूसरों के हित और लाभ का ध्यान रक्खा जाता है। ऐसे काम शांति और सद्विचारों के कारण होते है। उनके करने में करनेवाले को

तनिक भी लज्जा नहीं आती और न इस बात का भय होता है कि उनका क्या परिणाम होगा।

ऐसे कार्य जिनमें स्वार्थ साधन होता है, परंतु दूसरों को दुःख और हानि पहुँचती है, चाहे वे कैसे और कितने ही आवश्यक क्यों न हों, अच्छे काम करनेवाला मनुष्य उनको कभी नहीं करता। वह केवल उन्हीं कर्मों को करता है जिनमें दूसरों का हित हो। सम्यक् ज्ञान प्राप्त करने के लिये और निःस्वार्थ काम करने के लिये स्वार्थ की आहुति देनी पड़ती है वह निरन्तर अपनी कषायों को मन्द करने का प्रयत्न करता रहता है इस बात का अभ्यास करता है कि क्रोध के आवेश में किसी को कोई अपशब्द न कहे और न कोई अनुचित कार्य करे। वह सदा इन्द्रियों को अपने वश मे करने और चित्त को शांत रखने का उद्योग करता रहता है। स्वार्थ साधन के लिये छल, कपट और मायाचार के विचार को वह कभी मनमें स्थान भी नहीं देता। सच पूछो तो छल कपट विचार करना उसके लिये उतना ही कठिन है, जितना साधारण मनुष्यों के लिये सरल है। जिस काम को मनुष्य करके छिपाना चाहता है, जिस के प्रगट करने में उसे लज्जा आती है अथवा संकोच होता है अथवा समय पड़ने पर जिसका वह समर्थन नहीं कर सकता समझना चाहिये कि वह बुरा काम है। बुरे काम की यही पहिचान है। अच्छे काम के करने मे अथवा उसके प्रगट हो जाने में मनुष्य को कभी भय नहीं होता। अतएव बुरे काम को पहिचान कर उससे बचना चाहिये और उसका विचार भी मन में न लाना चाहिये।

इस प्रकार ईमानदारी के साथ अच्छे काम करने से मनुष्य

को अच्छे काम करने का अभ्यास हो जाएगा और उन बातों से बच जाएगा जिनके कारण दूसरे लोग उसको अपने माया जाल में फांस लेते हैं। वह कभी दूसरों के जाल में नहीं फँसेगा यहां तक कि यदि कोई आदमी कभी उससे किसी कागज पर हस्ताक्षर करने अथवा किसी बात का वचन देने को कहेगा, तो वह केवल उसके कहने में आकर ऐसा करने को कभी तैयार नहीं होगा। पहले वह हर एक बात पर अच्छी तरह से विचार करेगा, उसकी बुराई भलाई को सोचेगा, पीछे उसके विषय में हां या ना करेगा। सहसा बिना विचारे वह किसी काम के लिये तैयार नहीं होग। विचार करने के बाद जिस बात को अच्छा समझेगा, जिसमें अपना तथा दूसरों का हित देखेगा, उसे करेगा और जब काम को शुरू कर देगा तब स्वयं अपने को उनका ज़िम्मेदार समझेगा। वह केवल दूसरों की बातों में आ कर किसी काम को नहीं कर बैठता और न कभी किसी बात की शिकायत करता है कि क्या करूँ, उनके बहकावे में आकर ऐसा कर बैठा, कारण कि वह जिस काम को करता है पूर्ण विचार करके करता है। उसका कोई काम बिना विचारे नहीं होता। दुनिया में हज़ारों काम बिना विचार के अपूर्ण रह जाते हैं। निःसंदेह वे अच्छे भावों से किये जाते हैं, परन्तु विचार पूर्वक नहीं किये जाते, इसी कारण उनमे सफलता नही होती। अतएव जिस काम को करो विचार पूर्वक करो। इस लोकोक्ति को कभी मत भूलो कि मनुष्य को सॉप की तरह बुद्धिमान और बतख की तरह सरल होना चाहिये।

जितना मनुष्य अधिक विचार करता है, उतनाही अधिक उसमें अच्छा काम करने की शक्ति आती है, यहां तक कि कुछ

समय के बाद अच्छा काम करना उसका स्वभाव हो जाता है। विचारशील मनुष्य कभी मूर्खता से काम नहीं करता, वह जिस काम को करता है, बुद्धिमानी से करता है। यह न समझना चाहिए कि जो काम अच्छे भाव से किया जाता है, वह अच्छा ही होगा। अच्छा काम वही है जो पूर्ण विचार के साथ किया जाता है। दुनिया में वही मनुष्य सुखी रह सकता है और दूसरों को लाभ पहुँचा सकता है जो अच्छे काम करता है। दुनिया में धूर्त, मायाचारी मनुष्यों की बाहुल्यता है। वे धूर्तता का जाल फैला कर इस प्रकार लोगों को अपने चुंगल में फँसा लेते है कि वे बिना विचार किये काम कर बैठते है और अन्त में पश्चात्ताप करते हैं कि हाय हम धोके में आ गये! हमने तो बहुत अच्छे भावों से काम शुरू किया था, परन्तु क्या करे, अमुक मनुष्य ने धोका दिया। अस्तु, अब भविष्य में अधिक विचार से काम करेंगे।

उत्तम काम सदा उत्तम विचारों से होते है, अतएव जब मनुष्य अच्छे और बुरे कामों में पहिचान करता है तो वह अपने मन को विशुद्ध करता है और ज्यों ज्यों उसका मन विशुद्ध होता है, त्यों त्यों वह इस बात का अनुभव करता जाता है कि मेरा चरित्र और जीवन ऐसी मजबूत चट्टान पर बना हुआ है कि जिसे असफलता की सख्त से सख्त आंधी भी नहीं गिरा सकती और न कोई हानि पहुँचा सकती है।

४-सुवचन।

स त्य का ज्ञान केवल अभ्यास से होता है जब तक हृदय विशुद्ध न हो तब तक सत्य का ज्ञान नहीं हो सकता और हृदय की विशुद्धि के लिये सब से पहले सत्य वचन बोलने चाहियें! झूठ पाप और मायाचार का सर्वथा त्याग कर देना चाहिये। जब तक मनुष्य झूठ का त्याग नहीं करता और दूसरों की निंदा करता है तथा अपने मुख से अपशब्द निकालता रहता है तब तक उसके हृदय में आत्मिक ज्ञान का अंश भी नहीं आता। झूठा आदमी अंधकार में डूबा रहता है वह भलाई और बुराई में पहिचान भी नहीं कर सकता। उल्टा वह अपने दिल में यह समझता है कि झूठ बोलना और बुराई करना ज़रूरी है। इनसे उसकी तथा दूसरों की रक्षा होती है।

जिस मनुष्य को उच्च ज्ञान प्राप्त करना है, अपने हृदय को विशुद्ध बनाना है, उसे उचित है कि अपने विषय में सत्य ज्ञान रक्खे। यदि वह झूठ बोलता है, दूसरों से ईर्ष्या द्वेष रखता है, उनकी निंदा करता है और उनके प्रति कटु शब्दों का व्यवहार करता है, तो समझना चाहिये कि अभी तक उसने उच्च ज्ञान प्राप्त करना प्रारम्भ नहीं किया है। चाहे वह कैसा ही तत्ववेत्ता हो, ज्योतिष शास्त्र में कितना ही निपुण हो और जंत्र मंत्र विद्या में चतुर हो, यदि वह झूठा है और दूसरों की निंदा करता है,

तो वह उच्च-जीवन से कोसों दूर है। उच्च-जीवन के लिये किन बातों की आवश्यकता है? प्रेम, शील, संतोश, हर्ष, सरलता, नम्रता, सभ्यता, सत्यता, पवित्रता, दयालुता, और निस्स्वार्थता की, और जो मनुष्य इन गुणों को अपनाना जानता है उसे उचित है कि इनका अभ्यास करे। इसके सिवाय और कोई दूसरा उपाय नहीं है।

झूठ बोलते हुए और दूसरों की निन्दा करते हुए कोई मनुष्य आत्मोन्नति नहीं कर सकता। स्वार्थपरता और ईर्ष्या द्वेष के कारण ही मनुष्य झूठ बोलता है और दूसरों की निन्दा करता है।

पर-निंदा झूठ के समान ही किसी अंश में उससे भी बढ़कर है, कारण कि परनिंदा के साथ क्रोध का आवेश रहता है (जो मनुष्य दूसरे की निन्दा करता है, वह अवश्य उसके प्रति द्वेष भाव रखता है; निंदा करनेवाला मनुष्य ऊपर से अपने को ऐसा निर्दोष प्रगट करता है और अपने कथन को ऐसा बनाकर कहता है कि कितने भोले भाले मनुष्य उसके जाल में फंस जाते हैं। जो आदमी भूल कर भी झूठ नहीं बोलते वे भी उसकी बातों में आ जाते है और उनको सच समझ बैठते हैं। वह न केवल अपने आप बुराई में पड़ता है, किन्तु सुननेवाले को भी पाप पंकज में डालता है। झूठ का बोलना भी उतना ही बुरा है जितना झूठ का सुनना, कारण कि जब तक सुननेवाला न हो तब तक बोलनेवाला कुछ नही कर सकता। उसके वचनों का उसी समय असर होगा कि जब वे किसी के कान में पहुंचेंगे। अतएव जो मनुष्य दूसरे के मुँह से किसी की निंदा सुनता है) और सुन कर उस पर विश्वास करता है और तदनुसार उसके

प्रति द्वेष भाव रखता है तो उसमें और निंदा करनेवाले में कोई अन्तर नहीं रहता, वह उसके समान ही द्वेषी है। यदि कुछ अंतर है, तो केवल यह कि निंदा करनेवला मनुष्य खुले मैदान बुराई करता है और निंदा सुननेवाला चुपके चुपके बुराई करता है। बुराई के फैलाने में दोनों बराबर है।

दूसरे की निंदा करना, अपवाद करना यद्यपि एक साधारण बात है, परन्तु बड़ी हानिकर है। दूसरों के विषय में प्रायः लोग भूल और नासमझी से झूठी राय बना लिया करते है। प्रति दिन देखने में आता है कि बहुत से लोग बिना विचारे समझ बैठते है कि अमुक मनुष्य ने हमारी मान-हानि की, हमें अपशब्द कहे, इस कारण उनके क्रोध का कोई पारावार नही रहता, केवल इतना ही नही, किन्तु तीव्र क्रोध के कारण वे चाहे जिसको अपने क्रोध को प्रगट करने और कहने लगते है कि देखो उसने हमारे साथ कैसा बुरा व्यावहार किया, हमें कैसे अपशब्द कहे। यदि कहनेवाले ने दो शब्द कहे होंगे, तो वे बढ़ाकर चार बताते है। भावार्थ कहनेवालें के अभि-प्राय को न समझ कर क्रोधवश जो कुछ मन मे आता है कह बैठते है। सुननेवाले क्या करते है ? वे समझते है कि वास्तव में उंहोने बहुत बुरा किया, जो कुछ ये कहते है सच कहते है। बस, उस मनुष्य के विषय में वे अपनी राय केवल कहनेवालो के अनुसार ही बना लेते है। उसने वास्तव में किस अभिप्राय से बात कही थी और वह अपने बचाव में क्या कहता है इसकी तरफ़ उनका ध्यान भी नही जाता। वे एक तरफ़ा डिगरी दे देते है। झट उनकी बात पर विश्वास कर लेते है और वे भी

चाहे जिसके आगे उस बात को दोहराने लगते हैं। परिणाम यह होता है कि बात का बतंगड़ बन जाता है और राई का पहाड़ हो जाता है। अब जितने मुँह उतनी ही बातें हो जती है, कारण कि जो कोई कहता है वह अपनी तरफ से नमक मिर्च मिलाए बिन नही रहता। ज्यों का त्यों कोई नही कह सकता। चाहे किसी की स्मरण शक्ति कितनी ही तेज हो, वह भी जब कोई सुनी हुई बात किसी से कहेगा, तो ज़रूर कुछ न कुछ उसमें अपनी तरफ से घटा बढ़ा देगा। इसी तरह से जितने अधिक आदमियों में बात जाएगी, उतना ही अधिक फेर बात में हो जाएगा। होते होते यहाँ तक हो जाना सम्भव है कि यद्यपि कहनेवाले ने, जिसे दोषी ठहराया जाता है, बात मित्रता से कही हो, परन्तु सुनने वाले उससे यहाँ तक बुरा माने कि वे उसके कट्टर शत्रु बन जाएँ। यह सब अंध-विश्वास के कारण है। यदि दूसरे की बात को सुन कर एक दम उस पर विश्वास न कर लो, किंतु उस पर विचार करो, तो यह बुराई पैदा ही नही हो सकती, परन्तु आपत्ति यह है कि जहाँ किसी ने तुम्हारे सामने आकर कहा कि अमुक मनुष्य तुम्हारी बुराई करता था, बस फिर क्या था, जामे से बाहर हो गए और क्रोध में लाल पीले हो गये। तुमने क्षण भर भी इस बात पर विचार नहीं किया कि वह मनुष्य मेरी बुराई क्यों कर रहा था, और बुराई करने का कोई कारण भी है या नही। तुम व्यर्थ में दूसरे के कहने से अपने को दुखी करते हो और दूसरे को दोष देते हो। असिल बात यह है कि तुम स्वयं अपने लिये दुख के कारण हो। तुम दूसरे की बात को सुन कर एक दम उसे सच समझ बैठते हो। यही कारण है कि तुम दुखी रहते हो। सच्चा धर्मात्मा मनुष्य चाहे

कोई उसके सामने आकर कुछ भी कहे, कभी विश्वास नहीं करता। इसका मुख्य कारण यह है कि वह कभी किसी की बुराई नहीं करता। बुराई सुन कर वह मनुष्य बुरा मानता है, जो दूसरों की बुराई करता है। जो मनुष्य दूसरों की बुराई नहीं करता, चाहे उसके सामने चाहे पीछे लोग उसकी कितनी ही बुराई करें उसके दिल पर कोई असर नहीं होता, यहाँ तक कि जिन लोगों को भड़काने की आदत होती है, जब उनकी उसके आगे दाल नहीं गलती, तो वे कुछ बुरा भी मान जाते है। और उसकी निंदा तक करने लगते हैं, परन्तु वह किसी बात की परवा नही करता, कारण कि वह जानता है कि जब तक मैं कोई बुराई का काम न करूँगा, तब तक मुझे कोई हानि नही हो सकती। दूसरे लोग जो मेरी बुराई करते हैं, वे मेरा कुछ नहीं बिगाड़ते। मेरी बुराई करके वे अपने को ही हानि पहुँचाते है। वह इन्ही विचारों के कारण सदा शांत रहता है। अशांति का कभी लेश भी उसमे नहीं होता। उसका सिद्धांत सदैव यह रहता है कि यदि तू भला है तो चाहे लोग तेरी कितनी ही बुराई करें तो भी तू बुरा नहीं है, परन्तु यदि वास्तव में तू बुरा है और लोग तुझे बुरा कहते है, तो इसमे आश्चर्य क्या है? लोग सच कहते है, फिर उनके कहने से बुरा क्यों मानता है? ऐसा मनुष्य प्रत्येक अवस्था में सुखी रहता है और वही मनुष्य सच्चा कहलाता है।

पवित्र और नियमनिष्ठ जीवन के लिये सच बोलना सब से पहिला कर्त्तव्य है। यदि किसी मनुष्य का पवित्र जीवन की अभिलाषा है, और वह संसार के दुःखो को कम करना चाहता है, तो उसे उचित है कि वह झूठ बोलना और दूसरो की बुराई

करना छोड़ दे, यहाँ तक कि झूठ बोलने और बुराई करने के विचार भी मन में न लावे और न कभी दूसरे के मुँह से ऐसे शब्दों को सुने। उसे बुराई करने वाले पर यह सोच कर दया करनी चाहिये कि देखो यह आदमी कैसा मूर्ख है व्यर्थ में दूसरे की बुराई करके अपने को दुःख और कष्ट में डालता है कारण कि झूठा आदमी कभी सत्य के आनंद को नहीं जानता और दूसरे की निंदा करनेवाला मनुष्य कभी शांति के साम्राज्य में प्रवेश नहीं कर सकता।

जो वचन मनुष्य अपने मुँह से निकालता है उनसे उसकी आध्यात्मिक अवस्था प्रगट होती है और उन्हीं से अंत में उसका फ़ैसला किया जाता है। बाइबिल में लिखा है कि तेरे वचनों से ही तुझे सजा और जज़ा दी जएगी, अर्थात यदि तू सच बोलेगा तो तुझे इनाम दिया जाएगा और यदि झूठ बोलेगा तो सज़ा दी जएगी।

५—चित्त की शान्ति।

जो मनुष्य अपने में चित्त को चंचल चलायमान रखता है और जो घटनाओं की लहरों में बह जाता है, अर्थात जिस मनुष्य के विचार स्थिर नहीं है, उसे कभी शान्ति नहीं मिल सकती।

विचारशील मनुष्य में कषाय-वासना नहीं पाई जाती। वह सब से निष्पक्ष होकर शांत चित्त से मिलता है। पक्षपात उससे कोसों दूर रहता है। कषाय वासना को उसने सर्वथा त्याग दिया है। स्वार्थ की उसमें गंध नहीं रही है। सम्पूर्ण संसार से वह प्रेम और सहानुभूति रखता है।

जो मनुष्य पक्षपाती होता है, वह सदा यह समझता रहता है कि जो कुछ मेरी राय है और जो मेरा पक्ष है वही सच है, अन्य सब झूठे है। वह इतना भी नही विचार सकता है कि दूसरे की सम्मति और पक्ष में कुछ सार है कि नही। वह निरंतर अपनी रक्षा करने और दूसरे पर आक्रमण करने के विचार में ही लगा रहता है। शान्ति और साम्य भाव का उस मे अंश भी नही होता।

शान्त चित्त मनुष्य पक्षपात और कषाय वासना का अपने मन में प्रवेश भी नहीं होने देता। वह सदा उनकी परिछाई तक

से बचने का उद्योग करता रहता हैं। ऐसा करने से उसमें दूसरों के लिये सहानुभूति की मात्रा बढ़ने लगती है और वह उनके चित्त की अवस्था को जानने लगता है। ज्यों ज्यों उसे दूसरों का ज्ञान होता जाता है, त्यों त्यों वह इस बात को समझने लगता है कि मैं व्यर्थ में दूसरों को दोषी ठहराता हूं और उन्हें घृणा की दृष्टि से देखता हूं, यह मेरी सरासर मूर्खता है। इस प्रकार उसके हृदय में प्राणी मात्र के प्रति प्रेम और उदारता का भाव प्रादुर्भूत होने लगता है। संसार में जितने भी जीव हैं वे सब उसके प्रेम पात्र बन जाते हैं।

जब मनुष्य स्वार्थ और कषाय वासना के वशीभूत होता है, तो उसके ज्ञान-चक्षु मुंद जाते है। उन पर अज्ञानता का पर्दा पड़ जाता है। उसको केवल अपने ही पक्ष में भलाई मालूम होती है। दूसरे का पक्ष उसे सर्वथा झूठा प्रतीत होता है, जिसका यह परिणाम होता है कि उसे किसी वस्तु का भी वास्तविक ज्ञान नहीं होता, यहां तक कि वह अपनी अवस्था से भी अनभिज्ञ होता है। फिर जब उसे अपना ही ज्ञान नहीं होता तब दूसरों के हृदय की बात को कैसे जान सकता है। वह दूसरों की निंदा करने में ही भलाई समझता है। उसके हृदय में उन मनुष्यों के प्रति घृणा उत्पन्न हो जाती है जो उसके पक्ष में नहीं होते हैं और जिनके विचार उससे नहीं मिलते। परिणाम यह होता है कि वह सब से दूर और अलग रहता है और अपने कलुषित मन के कुत्सित विचारों में डूबा रहता है।

शांत चित्त मनुष्य का समय बड़े सुख और आनंद से व्यतीत होता है। बुद्धिबल से वह घृणा, द्वेष, शोक और संताप के मार्गों

का परित्याग करता है और प्रेम, स्नेह, सुख और शांति के मार्गों का अवलम्बन करता है। जीवन की दैनिक घटनाएँ उसे हानि नहीं पहुंचा सकतीं। जिन वस्तुओं को मनुष्य दुःखदाई समझते हैं, और जो साधारणतया सब मनुष्यों को भुगतनी पड़ती हैं वे उसे दुःख नहीं पहुंचा सकतीं। न उसे सफलता से अधिक हर्ष होता है और न असफलता से अधिक दुःख। न उस में व्यर्थ की स्वार्थयुक्त इच्छाएँ होती हैं और न बालको जैसी निराशाएँ।

अब प्रश्न यह है कि यह साम्य भाव अर्थात् मन और जीवन की सर्वोत्कृष्ट अवस्था किस प्रकार प्राप्त की जा सकती है? इसका केवल एक उपाय है और वह यह कि इन्द्रियों का दमन किया जाय और हृदय को विशुद्ध बनाया जाए। हृदय की विशुद्धि से सम्यक् ज्ञान की प्राप्ति होती है। सम्यक ज्ञान से साम्य भाव की उत्पत्ति होती है और साम्यभाव से शांति मिलती है। जिस मनुष्य का हृदय विशुद्ध नहीं है वह कषाय वासना की लहरों में असहाय बह जाता है, परंतु विशुद्ध हृदय मनुष्य शांति के बन्दरगाह में निवास करता है।

६—शुभ परिणाम।

हमारे जीवन की बहुत सी घटनाएँ हमारी इच्छा के बिना ही देखने में आती है, जिनका वाह्य में हमारे मन और स्वभाव से कुछ सम्बंध नहीं होता। ऐसी अकारण घटनाओं को हम दैवी घटनाएँ कहा करते है। इसी कारण एक मनुष्य दुनिया में भाग्यवान और दूसरा अभागा कहलाता है। सारांश यह है कि दुनिया में बहुत से आदमियों को वे चीज़ मिल जाती हैं, जिनके लिए उन्होंने कभी उद्योग नहीं किया और बहुत से आदमियों के पास वे चीज़ भी जाती रहती हैं, जिनके लिए उन्होंने रात दिन जी जान से परिश्रम किया। पहले प्रकार के आदमियों को लोग भाग्यवान और दूसरे प्रकार के लोगों को अभागा कहा करते है. परंतु सूक्ष्म दृष्टि से विचार करने और जीवन पर दिव्यदृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि विना कारण के संसार में कोई भी कार्य नहीं होता और कारण और कार्य का अत्यंत घनिष्ट सम्बंध है। जब यह बात है तो प्रत्येक घटना का जो हमारे जीवन में उपस्थित होती है, हमारे मन और स्वभाव से घनिष्ट सम्बंध है और निश्चय से उसका कारण हमारे अंदर मौजूद है। भावार्थ जिन घटनाओं को हम दैवी घटनाएँ समझ रहे है, वे हमारे ही विचारों और कार्यों का परिणाम है। निस्संदेह यह बात प्रत्यक्ष नहीं है, परंतु भौतिक संसार तक का कौनसा सिद्धांत ऐसा प्रत्यक्ष है? जिस प्रकार विचार अनुसंधान

और प्रत्यक्ष प्रमाण उन सिद्धांतों के आविष्कार के लिए आवश्यक है, जो एक परमाणु का दूसरे परमाणु से सम्बंध बतलाते हैं, उसी प्रकार वे उस कार्य प्रणाली के समझने और जानने के लिए भी आवश्यक हैं जो एक मानसिक अवस्था का दूसरी अवस्था में सम्बंध बनाती है और ऐसे ढंग और नियम उन लोगों को स्वयं मालूम होते हैं जो अच्छे काम करनेवाले होते है और अच्छे कामों के अभ्यास के कारण जिन्हे समझने की शक्ति हो जाती है।

हम वही काटते हैं जो बोते हैं। हमें वही मिलता है जिसके लिये हम उद्योग करते है। यह सम्भव है कि हम किसी पदार्थ की इच्छा न करते हों; परंतु बिना जाने बूझे उसके लिये श्रम कर रहे हों और वह हमें मिल जाए। शराबी आदमी पागल बनना नहीं चाहता, परंतु वह ऐसा काम करता है जिससे पागल हो जाता है। इस उदाहरण से यह बातें अच्छी तरह से समझ में आएगी कि संसार में कोई भी कार्य बिना कारण के नहीं होता। प्रत्येक कार्य का कारण होता है। तुम्हारे सुख दुख का कारण तुम्हारे ही अन्दर विद्यमान है, कहीं बाहर नहीं है। अतएव यदि तुम अपने विचारों में परिवर्तन कर दोगे, तो बाह्य घटनाएँ तुम्हें क्लेश न पहुँचा सकेंगी। तुम्हारा हृदय विशुद्ध और पवित्र बन जाएगा। संसार के सम्पूर्ण पदार्थ तुम्हारे लिये शुभ रूप हो जाएँगे और जीवन की समस्त घटनाएँ सुखदायक हो जाएँगी।

जीवन का अच्छा बुरा होना, स्वतंत्र और परतंत्र होना विचारों पर निर्भर है। जैसे मनुष्य के विचार होंगे, अच्छे या

बुरे, उन्हीं के अनुसार उसका जीवन होगा, कारण कि जितने भी कार्य मनुष्य करता है, वे सब उसके विचारानुकूल होते हैं। जैसी मन में भावना होती है, जैसी इच्छा होती है, वैसे ही कार्य होते है। काम करने से पहले उसके करने का मन मे विचार होता है। कोई काम बिना विचार के नही होता। फिर जैसे कार्य होते है, उन्ही के अनुसार फल मिलता है। बिना कारण के कोई कार्य नहीं होता। अतएव जब तक मन मे उत्तम विचार न होंगे, तब तक उत्तम कार्य नहीं हो सकते और जब तक उत्तम कार्य न होंगे, तब तक उससे उत्तम फल की आशा नहीं की जा सकती।

ऐसे दुनिया में बहुत से आदमी है जो रात दिन धन सम्पदा और सुख ऐश्वर्य के लिये उद्योग करते रहते हैं, परंतु उन्हे ये वस्तुएँ नहीं मिलतीं और ऐसे बहुत से आदमी नित्य उनके देखने में आते हैं, जिन्हे ये सब वस्तुएँ योंही बिना किसी प्रकार के श्रम और उद्योग के मिल जाती हैं। इसका क्या कारण है? क्या श्रम और उद्योग करने वाला मनुष्य असफल रहता है और उद्योग न करनेवाले मनुष्य को सफलता प्राप्त हो जाती है? नहीं, कदापि नही। वास्तव मे इसका कारण यह है कि जिन मनुष्यों की सफलता नहीं होती, वे स्वयँ अपने में ऐसे कारण उपस्थित कर लेते हैं जो उनकी इच्छाओं की पूर्ति नहीं होने देते।

मनुष्य के जीवन में कार्य कारण का और उद्योग और परिणाम का अत्यंत घनिष्ट सम्बंध है और शुभ परिणाम तभी प्राप्त हो सकते हैं, जब कि उत्तम रूप से उद्योग किया जाए

और उत्तम कारण उपस्थित किये जाएँ। जो मनुष्य उत्तम कार्य करता है और इन उपायों का अवलम्बन करता है कि जो सदुद्देश्य पर निर्धारित है, उसे शुभ परिणामों के लिए तनिक भी श्रम या उद्योग नहीं करना पड़ेगा, कारण कि वे स्वयं ही उसके पास उसके सुकार्यों के फल स्वरूप उपस्थित हो जाएँगे। मनुष्य के उसके ही कार्यों का फल मिलता है। यदि कार्य अच्छे है तो उसे सुख और शांति मिलेगी, यदि बुरे है तो दुःख और अशांति।

जैसा बोओगे वैसा काटोगे. जैसे काम करोगे, अच्छे या बुरे, उन्हीं के अनुसार फल मिलेगा, यद्यपि यह सिद्धांत नैतिक जगत् में बडा सरल है, तथापि लोग इसके समझने और स्वीकार करने मे संकोच करते है। एक विद्वान् का कथन है कि वही मनुष्य प्रकाश के गुण को अच्छी तरह समझ सकता है, कि जो कुछ काल तक अंधकार मे रहा है। दुनिया में जिसने न कुछ बोया है और न कुछ लगाया है, वह काटने और खाने की क्या आशा कर सकता है अथवा जिसने जौ बोया है, वह गेहूं कैसे पा सकता है? पृथ्वी में जैसा मनुष्य बीज डालता है, उसके ही अनुसार फल लगता है। यही प्रकृति का नियम है। ठीक यही दशा मनुष्य की मानसिक और आत्मिक भूमि की है। बहुत से मनुष्य बुराई करते है, परंतु उससे भलाई की आशा रखते है और जब बुराई का बीज फलता है और बुराई का परिणाम बुरा होता है तो हताश होकर रोने और अपने भाग्य को उलाहना देने लगते हैं कि हाय हमारे भाग्य में यही बदा था, हमारे कर्मों में यही दुःख देखना था। कभी कभी तो यह भी देखने में आता है कि वे अपने बुरे भाग्य को दूसरों